वे गुरु हैं हमारे

डॉ. धनेश्वरी गोस्वामी
मो. 7297004868

बड़ी मुश्किल से ग्यारहवीं कक्षा में एडमिशन हो पाया है। ग्यारहवीं में एडमिशन कोई मुश्किल काम तो नहीं है परंतु जब बात संस्कृत मीडियम स्कूल की हो तो किसी भी दलित छात्र-छात्रा के लिए थोड़ा मुश्किल हो जाता है। बड़ी मुश्किल से प्रधानाचार्य एडमिशन के लिए राजी हुए। उनका कहना था संस्कृत ही पढ़ना है तो हिंदी मीडियम से ही पढ़ लो। कनिष्ठ उपाध्याय की क्या आवश्यकता है? चेतना के पिता की जिद्द थी कि वह कनिष्ठ उपाध्याय की ही छात्र बने।

दाखिला तो हो गया पर चेतना को वहाँ का माहौल रास नहीं आया। कक्षा में सभी सवर्ण छात्र-छात्राओं के बीच एकमात्र दलित छात्र। उनकी बातें अलग थी जैसे 'आज कहाँ जीमने जाना है', 'फलाँ मंदिर में रोज का कितना चढ़ावा आता है', 'नया मंदिर कहाँ बना' और 'उसकी पण्डिताई किसको मिलने वाली है।' यह बातें सुनकर और पैसा कमाने के इस रंग-ढंग पर उसे बहुत आश्चर्य होता।

उसके आश्चर्य की सीमा तो तब पार कर गई जब उसने नवीं कक्षा में पढ़ने वाले प्रदीप चतुर्वेदी के बारे में सुना, सहपाठी सोमेश्वर बता रहा था, 'शनिवार को शनि महाराज के नाम पर तेल लेने जाता है। केतली हाथ में थी, आधी भरी। पूछने पर बताया, कभी-कभी आ जाता हूँ, जब जरूरत होती है।'

चेतना बोली, 'उसके माँ-बाप मना नहीं करते।' तब सोमेश्वर ने बताया, 'गाँव का है, यहाँ कमरा लेकर रहता है, दो और लड़के साथ रहते हैं।'

चेतना ने पूछा, 'पर... ये कैसी जरूरत, जो तेल माँगने पर ही पूरी होती है? ट्यूशन भी ले सकता है।'

'ट्यूशन!' सोमेश्वर ने जोर का ठहाका लगाते हुए कहा, 'अरे! जब पकौड़े तलने के लिए केतली भर तेल मिल जाए तो कोई क्यों बेवजह परेशान हो।'

'पकौड़े!' चौंकने के साथ ही चेतना की आँखें फटी की फटी रह गई।

चेतना के लिए यह सभी बातें बेहद अजीबोगरीब थी। आए-दिन ऐसे कई किस्से कक्षा के साथी एक-दूसरे को सुनाते रहते। सुनकर सभी ठहाका मारकर हँसते। चेतना की हँसी नहीं निकल पाती, एक सहपाठी ने पूछा, 'अरे! हँसती क्यों नहीं है, मुँह में दही जम गई

है क्या?' उसकी बात अभी खत्म भी नहीं हुई थी कि दूसरे ने तौंड मार दिया, 'वैसे तो खूब तर्क करती है, सिर्फ हँसना ही नहीं सीखा।'

ऐसी बेसिर-पैर की बातों का चेतना क्या जवाब देती? जिस समाज से वह है, वहाँ तेल माँगने की या जीमने जाने की परंपरा कभी रही नहीं। उसने तो अपने आस-पास के लोगों को दिनभर हाड़तोड़ मेहनत करते देखा है, तब जाकर रात की रोटी नसीब हो पाती है। पर यहाँ तो आए-दिन जजमान के यहाँ से न्योते आते हैं। कभी-कभी तो कक्षा के सभी छात्र भी कम पड़ जाते हैं तो अगली-पिछली कक्षा के अपने दोस्तों को मिलाकर संख्या पूरी की जाती है, कभी ग्यारह, कभी इक्कीस तो कभी इक्यावन। न जाने कब से यह संख्याएँ मंगल की पहचान बन गईं।

संस्कृत मीडियम विद्यालय में छोटी कक्षा से ही संस्कृत का ज्ञान करवा दिया जाता है। वैसे इसे विद्यालय कम पण्डिताई की शिक्षा व्यवस्था जरूर कह देना चाहिए। छोटी कक्षा से ही बच्चों को पाठ्यपुस्तकों के ज्ञान के साथ समय-समय पर पण्डिताई का ज्ञान भी दिया जाता रहा है। किसी भी मंगल आयोजन पर पण्डित को किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, इसकी बारीकियाँ कण्ठस्थ करवा दी जाती हैं।

चेतना सोमेश्वर से कह रही थी कि 'कितने बुद्धिमान हैं, उसके सहपाठी। इतने मेहनती कि कक्षा की पढ़ाई के साथ-साथ पण्डिताई की सारी नॉलेज भी है इन्हें। पूजा-पाठ के सारे श्लोक कठस्थ हैं। अद्‌भुत!'

चेतना को आश्चर्य करते देख सोमेश्वर पाण्डे ने कहा, 'अरे यार! इतना आश्चर्यचकित होने की जरूरत नहीं है, सुबह-शाम घर में यही सब सुनते हैं, जिस तरह से फिल्मी गाने जुबान पर चढ़ जाते हैं, उसी तरह हमें भी यह चीजें रट गई हैं। अर्थ पूछोगी ़तो मेरा कोई साथी नहीं बता पायेगा।'

'अगर कहीं अटक गये तो?'

'अरे! दो दिन पहले की बात है, किसी ने जीमने बुलाया, पूरे इक्यावन छात्रों को, अब तुरंत इक्यावन छात्रों का बंदोबस्त कैसे करता?'

'क्यों? हमारी क्लास में तो पचपन बच्चे हैं।' चेतना ने कहा।

'अरे! लडकियाँ नहीं जिमती, सिर्फ लड़के जाते हैं।'

'लेकिन नवरात्रि आदि में तो कन्या जिमाती हैं, फिर?' चेतना का प्रश्न सुनकर सोमेश्वर बोला, 'तुम्हारी बातों में, मैं मुख्य बात यह भूल जाऊँगा। मैं कह रहा था, तुरंत इक्यावन छात्रों को ले जाना था, जजमान के यहाँ। संख्या पूरी होने में दो कम पड़ रहे थे इसलिए सुरेश खटिक और उसके भाई को भी ले गया। पहली बार देखा था उन्होंने यह सब।' कहते हुए उसके चेहरे पर परोपकार वाला भाव आ गया। 'उन लोगों को हमारी वाली ट्रिक समझा दी थी कि बुदबुदाते रहना, जब जजमान पास आये तो बेझिझक जयदेव की 'चन्द्रालोक' या विश्वनाथ की 'साहित्य दर्पण' या जो भी कोर्स की किताब के श्लोक याद हो वो बोलना शुरू कर देना। सामने वाले को क्या पता कि हम पाठ्यपुस्तक के श्लोक बोल रहे हैं।' कहते हुए उसकी बांछें खिल उठी थी।

चेतना ने आपत्ति जताते हुए कहा, 'वो लोग तुम्हें धर्म के लिए बुलाते हैं और तुम तो धोखा देते हो।' सुनकर सोमेश्वर के चेहरे के भाव बदल गये। झल्लाते हुए बोला, 'तुझे बताना ही नहीं चाहिए।' चेतना को घूरकर लगभग चिल्लाते हुए उसने कहा, 'हम धोखेबाज और ठग हैं क्या? ब्राह्मण हैं हम। हमारे द्वारा किसी के घर में पाँव रखने से ही उसका घर पवित्र समझा जाता है। बकवास कर रही है।' चेतना भी तैश में आ गई, वह भी चिल्लाते हुए बोली, 'मुफ्तखोरी कहते हैं इसे। ज्ञान है नहीं और खुद को पण्डित कहलवाते हो, मुफ्तखोरी के लिए बेवकूफ बनाते हो।'

कक्षा में सोमेश्वर और चेतना के बीच हुई बातचीत जोशी सर के कानों तक पहुँच गई। दूसरे दिन कक्षा में पढ़ाने आए जोशी सर ने कुर्सी पर बैठते हुए लाड़ में चेतना से पूछा, 'और बच्चे क्या चल रहा है आजकल?'

'जी, कुछ नहीं।'

'रहते कहाँ हो?'

सर के प्रश्न पर वो एक नज़र कक्षा में दौड़ाती है, सिर्फ उसी से यह सवाल क्यों ? जवाब देती है, 'सर, शास्त्रीनगर।'

'अच्छा... पिताजी क्या करते हैं?'

'घर पर ही सिलाई का काम।'

'अच्छा-अच्छा, तो मंदिर में ही रहते हो।'

'मंदिर? मंदिर में क्यों रहेंगे? घर है हमारा।'

'तो मंदिर में नहीं रहते हो? हुम्म... तुम्हारा पूरा नाम क्या है?'

'जी, चेतना गौतम।'

'गौतम?'

'कौन से ब्राह्मण हो जी गौतम?'

'सर, मैं ब्राह्मण नहीं हूँ, अनुसूचित जाति में आती हूँ।'

जोशी सर के चेहरे के भाव बदलने लगे, कुछ रुककर वे बोले, 'लेकिन

गौतम तो...? चलो कोई बात नहीं, बैठ जाओ।' कक्षा में अजीब-सा माहौल हो गया था। घूरती नज़रों का सामना वह नहीं कर पा रही थी। एक शहर के होने के बावजूद भी वह उन लोगों के बीच अजनबी थी। तभी सर ने एक विद्यार्थी से कहा, 'अरे तिवारी जी, क्या चल रहा है, इन दिनों? सावन के सोमवार की कमाई में लगे हो। अजी! थोड़ा लघुसिद्धांत कौमुदी का भी ध्यान कर लो। कहीं जजमानी ग्रहण करते हुए मंत्र भूल गये तो पढ़ाई ही नैया पार लगायेगी।' यह सुनकर पूरी कक्षा ठहाकों से गूंज गई।

विद्यालय की प्रार्थना सभा में किसी भी विद्यार्थी को अचानक बुला लिया जाता था। प्रार्थना खत्म होने के बाद स्टेज पर विद्यार्थी द्वारा श्लोक, कविता, दोहे आदि बोलने का चलन था। अगर कोई बच्चा बोल नहीं पाता था तो प्रधानाचार्य के मुख से शहद में लिपटे ऐसे बोल निकलते जो सीधे विद्यार्थी के हृदय में शूल की तरह चुभते। वैसे तो एक विद्यार्थी का नंबर महीने में एक-दो बार आता था परंतु चेतना का नाम सप्ताह में दो-तीन बार पुकारा जाने लगा। अचानक बुला लिए जाने पर वो संभल नहीं पाती, उसे समझ नहीं आता कि क्या बोले। धीरे-धीरे उसका मनोबल टूटने लगा, उसे एहसास होने लगा कि विद्यालय में उसकी छवि डफर की बनती जा रही है। उन्हीं दिनों विद्यालयों के टूर्नामेंट भी शुरू हो गये। चेतना ने भी हिस्सा लिया और उदयपुर के लिए निकल गई।

सप्ताह-भर के टूर्नामेंट से चेतना में पुन: जोश का संचार हुआ। जिला स्तर पर होने वाली संस्कृत श्लोक अन्ताक्षरी में प्रथम स्थान आया था उसका। बैडमिंटन प्रतियोगिता में भी द्वितीय स्थान रहा था। अच्छे दोस्त भी बने जो हौसला अफजाई करते रहे। हालांकि यह हौसला स्कूल की इज्जत के लिए था परंतु चेतना के बहुत काम आया। वो उस जातिगत डर से निकली जो उसमें घर करने लगा था।

विद्यालय की बिल्डिंग में ही दिन के समय कॉलेज चलता था। चेतना ने वहीं शास्त्री में दाखिला लिया और टॉप भी किया। आज कॉलेज मार्कशीट लेने जा रही है। साथ में मिठाई का डब्बा भी है। कॉलेज पहुँचते ही वो हिंदी साहित्य पढ़ाने वाले ब्रह्मानन्द सर के पास गई, मार्कशीट उन्हीं से मिलनी थी। चेतना के चेहरे की खुशी साफ झलक रही थी। उसने कहा 'सर... मार्कशीट।',

उन्होंने कहा ''कहाँ से कर रही हो बी.एड.।'

चेतना ने खुशी जाहिर करते हुए कहा, 'सर में बी.एड. नहीं कर रही हूँ, मुझे आगे पढ़ना है इसलिए दिल्ली के विश्वविद्यालयों में प्रवेश परीक्षाएं दी थी, उन सभी में हो गया है, अब बस दाखिले के लिए विश्वविद्यालय का चयन करना है।'

यह सुनकर ब्रह्मानन्द सर की त्यौरियाँ चढ़ गई, तभी वाङ्मय पढ़ाने वाले अखिलेश्वर पाण्डे सर ने कमरे में प्रवेश किया। उन्होंने आँखें उचकाकर पूछा, 'क्या हुआ?'

'ब्रह्मानन्द सर, कुछ नहीं... चेतना अपनी आगे की पढ़ाई दिल्ली में रहकर करेगी। किस्मत देखिए इसकी... हम लोग अजमेर में पैदा हुए और यहीं मर भी जायेंगे और ये अजमेर में पैदा हुई और दिल्ली जाकर मरेगी।' ऐसी बातें सुनकर चेतना चौंक गई। उसके दिल की धड़कन बढ़ने लगी और आक्रोश का सैलाब उसकी आँखों में उमड़ पड़ा। वह सोचने लगी कि जिस सर की वो इतनी इज्जत करती थी, उनकी ऐसी सोच और ऐसे घृणित बोल। चेतना का ध्यान अपने हाथ में पकड़े मिठाई के डब्बे पर गया। मिठाई का डब्बा ब्रह्मानन्द सर की ओर बढ़ाते हुए बोली, 'सर, मुँह मीठा कीजिए मैंने शास्त्री में टॉप किया है।' अनमने भाव से हाथ आगे बढ़ाकर दोनों ने एक-एक मिठाई का पीस ले लिया। तभी चेतना ने ब्रह्मानन्द सर से कहा, 'सर आप और मिठाई लीजिए, आपके विषय में मुझे हाईयेस्ट मार्क्स मिलें हैं।' बात सुनकर उन्होंने अपनी नज़र फाइलों में गड़ा ली और फुर्ती से औपचारिक खानापूर्ति करके मेज़ पर चेतना की मार्कशीट सरका दी। मार्कशीट लेकर जैसे ही कमरे से बाहर निकली, उसे संस्कृत साहित्य पढ़ाने वाले तिवारी सर मिल गये। वहीं सर जो स्कूल में चेतना का दाखिला नहीं होने देना चाहते थे। परीक्षा पास कर कॉलेज में पढ़ाने लगे है। उन्होंने चेतना को रोक कर पूछा, 'परीक्षा में कैसे लिखती हो?'

चेतना बोली, 'मतलब!'

समझाते हुए बोले, 'अरे! अक्षर छोटा लिखती हो कि बड़ा-बड़ा।'

गुस्से में तो वह थी, बोली, 'आप नंबर छोटे अक्षर पर ज्यादा देते हैं या बड़े अक्षरों पर।' अबकी बार तिवारी सर ने कहा 'मतलब!'

चेतना ने अपने अंदर का गुस्सा दबाते हुए कहा, 'मतलब कुछ भी नहीं, प्रश्नानुसार उत्तर लिखती हूँ।' यह कहते

हुए वह तुरंत कॉलेज के बाहर निकल आई।

पूरे रास्ते वह यही सोचती रही कि इनकी नज़र में अनुसूचित जाति में जन्म होना पाप है, उसके साथ बुद्धिमान होना भी।

दिल्ली से एम.ए. करने के बाद वह फिर से एम.फिल., पीएच.डी. की तैयारी में जुट गई। हर विश्वविद्यालय में किसी न किसी कक्षा के छात्र अपने प्रोफेसरों के प्रिय छात्र बनना चाहते हैं, इसी दौड़ में वे छात्रों के बीच की बातचीत को अपने प्रिय गुरुओं तक पहुँचाते है। अधिकांश गुरुओं को भी छात्रों के बीच चलने वाली बातचीत को जानने में रस आता है। चेतना की क्लासमेट पवित्रा चौबे, अभिनय पाण्ड्या गुरुओं के खासम-खास थे। प्रवेश परीक्षा की तैयारी में जुटी चेतना के परिश्रम की खबर इनके द्वारा गुरुओं तक पहुँचा दी गई थी।

लिखित परीक्षा में चेतना ने टॉप किया, यह खबर आग की तरह फैल गई। अब मौखिक परीक्षा शेष थी। जातिवादियों के बीच कानाफूसी होने लगी–'ये दलित रिजर्व सीट तो लेते ही हैं, हमारी जनरल की सीट पर भी कब्जा जमा लेते हैं। अरे! जो सीट तुम्हारें लिए छोड़ी गई है, वही लो ना।' यह बात चेतना के कानों में भी पड़ी। उसने पूरी जान लगा दी तैयारी में। वाइवा भी पच्चीस मिनट तक चला, बहुत बढ़िया रहा।

पूरे एक महीने बाद रिजल्ट आया। देखकर चेतना चौंक गई। उसकी एस. सी. कैटेगरी में फर्स्ट रैंक आई। यह तो उसे एडमिशन के चार-पाँच महीने बाद, परीक्षा के नंबर जब ऑनलाइन डाले गये थे तब पता चला कि वाइवा में उसे बीस में से सिर्फ चार नंबर मिले हैं। यानी कि साठ+चार=कुल चौंसठ। अनित्यानन्द दधीच के लिखित में पचास नंबर आये थे, उसे वाइवा में सोलह अंक मिलें। अंतिम प्रयास करके आखिर उसे लटकने से बचा ही लिया। चेतना सोचने लगी–'इतना घालमेल... सबके सामने इनके मुँह से समानता का झरना बहता है और हकीकत में कितने खोखले हैं यह लोग।'

यह जातिगत अपमान ही था। सिर्फ बीस नंबर देने का अधिकार मिलने पर यह लोग इतना गिर सकते हैं तो सोचो अगर पूरी परीक्षा प्रक्रिया ही इनके हाथ में आ जाए तो बहुजनों का उच्च शिक्षा पाना तो असंभव हो जाए। कोर्स वर्क बढ़िया जा रहा था, ग्रेड भी अच्छी आ रही थी। आंबेडकर, फूले, मार्क्स आदि को पढ़कर उसके सोच का दायरा विस्तृत होने लगा था। बहुजन संगठनों से जुड़ने लगी थी। बहुजन साथियों के साथ होने वाले जातिगत अनुभवों को सुनकर उसके रोंगटे खड़े हो जाते थे। उसे भी याद आया कि जब वह बारहवीं कक्षा में थी, तब मामा की लड़की की शादी में गाँव गई थी। नानी के घर से पहले राजपूतों की बस्ती थी, वहीं से होते हुए नानी के घर का रास्ता था। एक ही कुँआ था गाँव में, राजपूतों की बस्ती के अंतिम छोर और दलितों की बस्ती की शुरुआती सीमा पर। शादी-ब्याह में पानी की किल्लत के चलते चेतना भी घड़ा लेकर ममेरी बहनों के साथ कुँए पर गई। दो नल थे, विभाजित। अपनी बहनों के साथ हँसी-ठिठोली करते हुए उसने देखा, एक बुजुर्ग महिला जिसके गले में तुलसी की माला है, अपने घड़े को पानी से भरकर इंतजार कर रही है कि कोई सहारा देकर उसके सिर पर घड़ा रख दे। चेतना को अपनी ममेरी बहनों पर गुस्सा आया, जो बेचारी बूढ़ी अम्मा को अनदेखा कर रही थी। चेतना ने झुककर घड़े के ऊपरी हिस्से को पकड़ लिया और 'लो, अम्मा मैं रखवा देती हूँ सिर पर', कहना चाह ही रही थी कि उस बूढ़ी अम्मा को जैसे ततैया काट गया हो, चिल्लाने लगी, 'हाय! मेरा सारा पानी खराब कर दिया।' और पूरे घड़े का पानी, जिसे भरने में कम से कम दस से पन्द्रह मिनट तो लगे ही होंगे, पास के नाले के सुपुर्द हो गया। ममेरी बहनें इस बात पर खूब हँसी थी और कह रही थी, 'शहर नहीं है यह।' चेतना पैर पटकती हुई नानी के घर आ गई थी। इस घटना से उस वक्त वह आहत जरूर हुई थी, पर मायने आज समझ पायी।

जातिगत भेदभाव के किस्से एक के बाद एक उसे याद आने लगे। शास्त्री प्रथम वर्ष के दौरान कक्षा में द्वितीय वर्ष के छात्र की कॉपी हाथ में लिए लगभग धिक्कारते हुए ही ब्रह्मानन्द सर ने कहा था, 'मनोज रैगर... साला नाम के पीछे एपरोच लगाता है।' और गुस्से में कॉपी को मेज पर पटक दिया। उसे देखकर सभी का कहना था– 'तुम्हें देखकर लगता नहीं कि तुम अनुसूचित जाति से हो।' और 'अनुसूचित जाति की होने के बाद भी पढ़ाई में इतनी तेज हो।' ऐसी बातें उसने कई बार सुनी, लेकिन कभी गौर नहीं किया इसके पीछे की सच्चाई पर।

कोर्स वर्क चल रहा था। प्रजन्टेशन के टॉपिक बता दिये गये थे। एक-दो दिन में प्रजन्टेशन भी हो गया। कुछ

दिन बाद ग्रेड आई। चेतना अपनी ग्रेड देखकर चौंक गई। जिस प्रजन्टेशन की तारीफ पूरी क्लास के सामने सर ने की थी, उसमें उसे बी माइनस मिला है। दूसरे दिन जब क्लास हुई तो उसने विश्वनाथ सिंह सर से कहा, 'सर मेरा एक प्रश्न है आपसे?'

सर ने उसकी ओर देखा, उनके बोलने से पहले ही वह बोली, 'सर, पूरी कक्षा के समक्ष आपने मेरे प्रजन्टेशन की तारीफ की थी, तो आपके ऐसे क्या कारण रहे, जिनके चलते आपने मुझे बी. माइनस दिया। जबकि आपने स्वयं कहा था कि मेरा प्रजन्टेशन ए प्लस के लेवल का है।'

विश्वनाथ सिंह कुछ बोल नहीं पाए। उन्हें अंदाजा नहीं था कि उनकी कोई बहुजन छात्रा ऐसा दुस्साहस भी कर सकती है। उसने कक्षा में चिल्लाकर कहा, 'जातिगत भेदभाव कर रहे हैं आप, वो भी इतने चौड़ में, आपको अपने पद का भी मान नहीं रहा, जब तक आप जैसे लोग ऐसे सम्मानित पदों पर बने रहेंगे तब तक हमारा भी हौसला डगमगाने वाला नहीं, करिए आप अपने मन की, हम अपने मन की करेंगे, ऐसे करते हुए आपको थोड़ी-सी भी लज्जा नहीं आयी...' पूरी क्लास में सन्नाटा छा गया।

क्या बोलते अब? इसलिए विश्वनाथ सिंह क्लास खत्म होने के समय से पहले ही अपना सामान समेट कर अपने चैंबर में चले गये।

पवित्रा ने चेतना को शांत कराते हुए कहा, 'अरे! यार इतना गुस्सा मत कर। ले पानी पी ले।' और पानी की बॉटल उसकी ओर बढ़ा दी। चेतना ने बॉटल हाथ में लेते हुए उसे जोर से दीवार पर दे मारी और चिल्लाते हुए बोली, 'हट! दोगला।'

बॉटल का पानी पूरी कक्षा में फैल गया था। पवित्रा अपने गुरु का अपमान नहीं सह सकी। उसने कहा, 'यार ऐसा मत बोल, वो गुरु हैं हमारे।'

क्रोध से लाल हो गई चेतना, चिल्लाकर कहा, 'मैं अपनी मेहनत के नंबर माँग रही हूँ। चमचागीरी करने के नहीं, चमचागीरी करके नंबर बटोरने की कला नहीं है मुझमें।'

अबकी बार पैर पटकती हुई पवित्रा भी कक्षा से निकल गई।

दूसरे दिन चेतना विश्वविद्यालय गई तो देखा नोटिस बोर्ड पर ग्रेड लिस्ट में उसके नाम के आगे ब्लू पेन से जो बी माइनस लिखा था उस पर लाल पेन से सीधी रेखा खींचकर बी प्लस बना दिया गया है। यह देखकर उसकी हँसी निकल गई।❑

पृष्ठ सं. 78 का शेष भाग

काट रही थी। ग्राउंड में फैली खिली धूप में छात्राओं का समूह भी खिले हुए पुष्प गुच्छों की तरह लग रहा था। हँसती, खेलती, सपने देखती बच्चियों के बीच कीर्ति हर झुंड में खुद को खड़ा देख रही थी। आगे बढ़ते हुए वह महसूस कर रही थी कि बहुत धीरे सब कुछ पीछे छूट रहा है। उसकी इच्छाएं, उम्मीदें, धरती की हरी घास का मोड़, आसमान का नीला रंग... पर तभी उसने महसूस किया कि धरती पीछे नहीं, साथ चल रही है। उसकी जमीन, मिट्टी, मिट्टी का रंग, धूल; उसे अचानक वापस कुछ मिल गया था।

उसे अचानक भैया की पंचर साइकिल वाली बात याद आ गई। एक बार फिर से उसके पैरों में साइकिल के दोनों पहिए निकल आए थे। स्टॉफ रूम की ओर वह तेजी से आगे बढ़ी। वहाँ जाकर सीनियर टीचर्स के ग्रुप में बैठी डॉ. स्वर्णलता शर्मा से उसने दो टूक शब्दों में कहा, 'आप मेरा टाइम टेबल ठीक कीजिए। यह हर सेमेस्टर में नहीं चलेगा। मैं इस बार प्राचार्या के पास जाकर इसकी लिखित शिकायत करूँगी।' फिर तेजी से उसने पास रखे हॉटकेस से खाने का डिब्बा निकाला। आज अकेले बैठने की बजाय उसी टेबल पर सभी के बीच उसने ढक्कन को कटोरी से आजाद कर दिया। खाने की खुशबू हवा में थी। सामने वाले समूह की त्यौरियाँ चढ़ चुकी थीं। वे लगातार आपस में तेज आवाजों में बातें कर रहे थे। सारी आवाजों में उसकी इस हरकत की बुराईयाँ हो रही थीं। उसने कुछ खास ध्यान नहीं दिया। उसके दिमाग में तो एक आवाज तेजी से घूम रही थी, 'साइकिल चलाना थोड़े छोड़ देंगे, यात्रा करना थोड़े छोड़ देंगे।' अभी तो उसे स्टाफ रूम की खिड़कियों के बाहर नीला आसमान नजर आ रहा था। खाना खाने के बाद उसने अपना झोले वाला बैग उठाकर कंधों पर रखा और वहाँ से निकलकर क्लास की ओर बढ़ने लगी। एक छात्रा ने उसके कंधे पर टंगे झोलेनुमा बैग पर लिखे अक्षरों को देख कर ध्यान से पढ़ा। वहाँ अंग्रेजी में 'HAUSLA' और उसी लाइन के नीचे हिंदी में 'हौसला' लिखा था।❑